INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF INDIA
ISSN 2454-8707 VOLUME-II,ISSUE-V, JAN-2017

ऋग्वेद :सृष्टि और दृष्टि

डॉ. मुकुल खंडेलवाल
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग ग्रेजुएट स्कूल कॉलेज ऑफ वीमेन झारखण्ड, (भारत)

काव्य मींमासाकार आचार्य राजशेखर ने वेद तीन ही माना है – ऋक्, यजुष और साम। अथर्व चौथा वेद है किन्तु उसमें अधिकांश तथ्य इन्हीं तीन वेदों से गृहीत हैं। सामवेद में ऋग्वेद के हीं गेय मंत्रों का प्राधान्य है। ऋग्वेद में शारीरिक–मानसिक श्रम विभाजन नहीं है, यह उसकी बड़ी विशेषता है। ऋग्वेद लगभग छत्तीस ऋषिवंशों के तीन सौ अठहतर ऋषि और उन्नतीस ऋषिकाओं की दस हजार चार सौ बहत्तर ऋचाओं का संग्रह है। ये ऋचाएँ एक हजार सत्रह सूक्तों और दस मण्डलों में विभक्त हैं। कई ऋषिओं की तीन–तीन पीढ़ियों ने ऋचाएँ गाई हैं। ये ऋचाएँ ऋषिओं से सुनकर उनके वंशजों और शिष्यों ने कंठस्थ रखी। अतः वेद श्रुति है। ऋचाएँ ऋषि–ऋषिकाओं ने स्वयं गाई है। 'ऋग्वेद' आत्मकाव्य है। 'ऋग्वेद' में मुख्यतः कविता प्रकृति वर्णन है। 'ऋग्वेद' प्रकृतिकाव्य है। ऋग्वेद में प्रकृति की स्तुतियों में उच्च भौतिकविज्ञान का वर्णन है। इस दृष्टि से 'ऋग्वेद' विज्ञानकाव्य है। दीर्घजीवन जीने ऋषि–ऋषिकाओं ने स्वयं जीकर ऋचाओं में अपने अनुभव कहे हैं। अतः 'ऋग्वेद' आयुर्विज्ञानवेद है। 'ऋग्वेद' में जीवन की दो वृत्तियाँ–शृंगार और वीरता का मुख्यतः वर्णन है। 'ऋग्वेद' शृंगार और वीरकाव्य है। इन दो वृत्तियों में भी ऋषिओं ने जीवन में शृंगार को प्रमुख पाया है। प्रकृति का अंग–अंग शृंगार में निमग्न है। जैसे सूर्य पृथ्वी के प्रेमालिंगन में आबद्ध हैं और प्राणिसृष्टि हो रही है वैसे ही प्राणीं भी कामग्रस्त होकर सृष्टि को वर्द्धमान करने में व्यस्त है। रतिगुर, रत्यङ्गप्रदर्शनस्तवन, रतिप्रस्ताव, रतिव्यस्तस्थिति में व्यक्त रति–अनुभव, एवं विषय को रसप्रद रूप देने के लिए उपमा, रूपकादि द्वारा लगभग चार सौ से भी अधिक संदर्भों में 'ऋग्वेद' में ऋषि–ऋषिकाओं ने शृंगार का खुलकर वर्णन किया है। इस प्रकार 'ऋग्वेद' एक शृंगारप्रधानप्रमुखकाव्य है। 'ऋग्वेद' के उपर्युक्त काव्य प्रकारों में से प्रत्येक पर शत–शत प्रबन्ध निछावर हैं और शत–शत प्रबन्ध लिखे जा सकते हैं–'प्रबन्धाः शतायन्ते'। 'ऋग्वेद' में ऋषि–ऋषिकाओं ने अधिकांश रूप में मुक्तक कविताएँ (ऋचाएँ) कही हैं। यत्र–तत्र कथात्मक, नाट्यात्मक एवं संवादात्मक रूप में प्रबन्धकाव्य तथा नाट्यकाव्य के भी प्रयोग मिलते हैं। कवि ऋषियों ने प्रकृति में मानवीकरण द्वारा मानववत् आचरण दर्शाया है। प्रकृति जीवन्त है। सूर्यादि प्रकृति का अपना परिवार है और वह भी मानववत् काम, क्रोध, लोभ, मोह में ग्रस्त होकर कर्मरत है। ऋषिओं ने 'ऋग्वेद' में रुपक, साङ्गरुपक, रुपकातिशयोक्ति, उपमा, समासोक्ति, अन्योक्ति, विभावना, विशेषोक्ति, स्वभावोक्ति इत्यादि अलंकारों द्वारा प्रकृति में मानववत् आचरण को रुपायित किया है। 'ऋग्वेद' की भाषा तथा ईरानी भाषा–जिसमें पारसियों का धर्मग्रन्थ 'अवेस्ता' है, और यूरोप की लैटिन भाषा ये तीनों मूल रोपीय भाषा से उद्भूत हैं या ये तीनों सहोदर भाषाएँ हैं। ऋग्वेद की भाषा भारतीय आर्यों की मातृभाषा थी। संस्कृत भाषा इसी का आगे का व्याकरणिक नियमों में नियमें में आबद्ध परिष्कृत रूप है। तात्पर्य यह है कि ऋग्वेद की भाषा पहाड़ की गुफा है तो संस्कृत, शिल्पियों द्वारा नाप–जोख निर्मित भव्य भवन हैं। संस्कृत के शिल्पी हैं मुनित्रय–पाणिनी, कात्यायन और पत जलि। 'ऋग्वेद' में दो से सात मण्डल प्राचीन हैं। ये परिवार मण्डल हैं। इनमें से प्रत्येक मण्डल या तो एक ही ऋषि की रचना है या फिर एक ही ऋषि के परिवार के ऋषियों की रचना है। यह परिवार मण्डल ऋग्वेद का प्रथम संग्रह था। जब और सूक्त रचे गए तब प्रथम संग्रह में उन्हें मण्डल आठ के नाम से जोड़ दिया गया। यह ऋग्वेद का द्वितीय संग्रह था। जब और सूक्त रचे गए तब द्वितीय संग्रह से मण्डल एक के नाम से उन्हें जोड़ दिया गया। यह ऋग्वेद का तृतीय संग्रह था। जब और सूक्त रचे गए तब तृतीय

संग्रह में मण्डल दस के नाम से उन्हें जोड़ दिया गया। यह ऋग्वेद का चतुर्थ संग्रह था। परिवार मण्डल से चतुर्थ संग्रह तक के ऋषियों ने जितने सोमसूक्त रचे थे उन्हें मण्डल के नौ के नाम से ऋग्वेद में जोड़ दिया गया। इस प्रकार चार विविध कालखंडों और चार संग्रहों के रूप में दस मण्डलीय 'ऋग्वेद' की सृष्टि हुई। ऋग्वेद के चारो संग्रह के कर्ता विविध कालों में हुए उत्पन्न ऋषि हैं। किसी वेदघाती वेदान्ती और पौराणिक व्यास को वेदसंग्रहकर्ता का श्रेय देना अस्पर्श्य को स्पर्श करना है। वस्तुतः गृहस्थ संसारियों के लिए 'ऋग्वेद' मधुर फूलों से लदा एक महावृक्ष है। इसके दो से सात मण्डल ऋग्वेद के मूल, मण्डल सात तना, मण्डल नौ शाखा–प्रशाखाएँ, मण्डल दस पत्र, पुष्प, फल और मण्डल नौ सम्पूर्ण ऋग्वेद में व्याप्त जीवन तत्त्व है।

सोम को ऋषि नृमेध आङ्गिरस जीवन तत्त्व कर रहा है– एष सूर्येण हासते पवमानो अधि द्यवि। पवित्र मत्सरो मदः।। (ऋग्वेद 9.27.5) अर्थात्–सूर्य अपनी किरणों से सोम (जीवन तत्व रेतस्, वीर्य) का अन्तरिक्ष के वातावरण और पृथ्वी में आधान कर रहा है और इसी प्रक्रिया से सृष्टि हो रही है। भाष्यकार वेङ्कट सोम को अतीन्द्र कहते हैं–सोम अतीन्द्र, ऋग्वेद जैसे वृक्ष के मूल से तना, तने से शाखा–प्रशाखाएँ और शाखा–प्रशाखाओं के रुप में विकासक्रम से पत्र, पुष्प, फल प्रवर्द्धमान होते हैं वैसे ही 'ऋग्वेद' के परिवारमण्डल के ऋषिओं द्वारा वर्णित विषय (देवता) भी आगे–आगे के मण्डलों में प्रवर्द्धमान हुए हैं। ऋषि–ऋषिकाओं ने जिन विषयों पर ऋचाएँ गाई हैं उन विषयों को 'देवता' नाम से अभिहित किया गया है– 'या तेनोच्यते सा देवता'। 'देवता' पद स्त्रीलिंग है। देवता इसलिए कि ऋषि–ऋषिकाओं द्वारा कथित विषय इनके द्वारा देदीप्यमान हो रहे हैं। प्रकृति के अग्नि, सूर्य, मरुत्, जल, पृथ्वी इत्यादि तथा जीवनयात्रा से सम्बद्ध सुख–दुःख के लौकिक विषय, जिनका ऋषि–ऋषिकाओं ने ऋचाओं में वर्णन किया है–वे सभी देवता हैं। ऋग्वेद में पाँच सौ से भी अधिक प्राकृतिक एवं लौकिक देवताओं का वर्णन है। विषय की व्यापकता की दृष्टि से 'ऋग्वेद' अपने युग का विश्वकोश है। किसी भी भाषा के विकास की प्रारम्भ की अपरिपक्व स्थिति में प्रथम पद्य और जब भाषा परिपक्व हो जाती है तब उसमें गद्य में साहित्य की रचना होती है। इस भाषा–विकास के क्रम के अनुरूप ही प्रथम पद्य में ऋग्वेद की और तत्पश्चात् गद्य में यजुर्वेद की रचना हुई है। कविता पठ्य और गेय दोनो ही है। ऋग्वेद की ऋचाओं में से छाटकर गाने के लिए जो अलग संग्रह बनाया गया वही सामवेद है। ये तीनों वेद ही – 'वेदत्रयी' कहलाते हैं। वैदिक उपासना के ये तीनों वेद आधार हैं। यज्ञीय विधान के अनुसार ऋग्वेद की ऋचाओं से देवताओं को स्तुतिपूर्वक हवि ग्रहण और सोमपान करने हेतु यज्ञवेदि पर निमंत्रित किया जाता है। यजुर्वेद के यज्ञीय विधि–विधान के अनुसार देवता हवि ग्रहण करते हैं। सामवेद की ऋचाओं को सामस्वर में गाकर देवताओं एवं यज्ञ में उपस्थित समाज का मनोरंजन किया जाता है। ऋग्वेद के ऋत्विज को होता, यजुर्वेद के ऋत्विज् को अध्वर्यु और सामवेद के ऋत्विज को 'उद्गाता' कहते हैं। जादू–टोना, औषध इत्यादि से सम्बद्ध अथर्ववेद यथार्थ में वैदिक स्वभाव नहीं रखता है। फलतः लोग इसे वेद नहीं मानकर इसे प्रकीर्णवेद कहते हैं। इसमें अध्यात्म, राजनीति इत्यादि से सम्बद्ध मन्त्र भी मिश्रित हैं। ऋग्वेद के ऋषि कवि नाम से ख्यात हैं। अन्तरिक्ष की युद्धभूमि में अस्त्र–शस्त्रों के साथ खलनायक वृत्र (मेघ) तो अपनी असुर सेना (मेघों) के साथ प्रत्यक्ष है पर युद्ध नायक का नामोनिशान नहीं है। ऋषि कवि हैं। उन्होंने अपनी कल्पना से वज्रवाहु देवराज इन्द्र की कल्पना कर मरुतों की विशाल सेना का उसे सेनापति बना दिया। 'ऋग्वेद' में अन्तरिक्ष इन्द्र–वृत्र युद्ध की घमासान युद्ध भूमि बन गया। वीर इन्द्र के 'ऋग्वेद' में सर्वाधिक सूक्त हैं जो ऋषि–ऋषिकाओं के वीरत्व के प्रमाण हैं।

'ऋग्वेद' में वर्षा ऋतु का विस्तारपूर्वक ऋचाओं में वर्णन है। वह भी इन्द्र की ही आभारी है। वर्षा है तो वर्ष है, संवत्सर है, जीवन है। विश्ववाङ्मय में काव्य विरल हैं। समान आयु के युवाओं की मण्डली जब सोम छान रही हो तब वह कैसे स्वयं को शृंगार के रोमान्च से अछूता रख सकेगी ? ऋषि शिशु आडिगरस का मन सोम की सुगन्ध मात्र से ही चंचल एवं कामासक्त हो उठा है। वह कहता है–'अश्व सुख से खींच सके वैसा रथ चाहता है। युवा मित्रों की मण्डली उपहास की हल्दी–फुलकी बातें चाहती हैं। शिश्ना रोमवती योनि चाहता है। मेंढ़क पानी चाहता है और यह सोम इन्द्र के लिए कलश में बहना चाहता है'– अश्वों वोह्लां सुखं रथं हसनामुंपमन्त्रिणः। शेपो रोमंण्वन्तौ भेदौ वारिन्मण्डूक इच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्त्रव (ऋग. 19–112–4) यही ऋषि सोम छानता हुआ अपने एवं युगीय जीवन के निर्वाह के उद्योगों का ऋचाओं में बड़ा ही जीवन्त शब्दचित्र अंकित कर रहा है– कारुरहं ततो भिषगुपलप्रक्षणी नना। नानाधियो वंसूयवो नु गा इव तस्थिमेन्द्रायेन्दो परि स्त्रव।9–1–12–3।। इस प्रकार 'ऋग्वेद' की ऋचाएँ–ऋषिकाओं के जीवन निर्वाह के तत्कालीन उद्योगों का न केवल ताना–बाना हैं अपितु तत्कालीन युग की ये प्रतिबिम्ब भी हैं। 'ऋग्वेद' मुख्यतः स्तुतिकाव्य है, पर इसमें गौण रूप में धान, घृत, मधु, सोम एवं पशु आहुतियों के रुप में यज्ञों का स्वल्प वर्णन है। यज्ञों में सोम की आहुतियों से इन्द्रादि देवों का संतृत्प करने का ऋग्वेदकाल में माहात्म्य अधिक था। ऋग्वेदकाल के यज्ञों में जिस देवता को हवि अर्पित करना होता था उस देवता का ऋचा–स्तुति द्वारा यज्ञवेदि पर आवाहन करके उसे हवि अर्पित किया जाता था। हवि अर्पण के समय देवता का अगल से न चतुर्थी विभक्ति – जैसे 'आग्नेय' – के रूप में नामोल्लेख किया जाता था और न उसके आगे 'स्वाहा' का प्रयोग किया जाता था। यज्ञोपवीतसंस्कार भी उस काल में नहीं होता था। प्रकृति स्वयंभू है। यह सृष्टि कर्म के लिए है। सृष्टि का मूल पदार्थ अग्नि है। नक्षत्र, सूर्य, ग्रहोपग्रह, वायु, जल और प्राणिसृष्टि सभी अग्नि के ही परिणमनचक्र हैं। सवों का जन्मदाता और भोक्ता अग्नि है। ऋषि–ऋषिकाएँ भोगवादी और सुखवादी थे। सूर्यादि प्रकृति की स्तुतियों में उन्होंने पदार्थों की ही याचना की है जीवन के सर्व पुरूषार्थ भी वे अपने भोग्य

पदार्थों के लिए ही करते थे। ऋषि जानते थे कि जीवन एक ही बार मिलता है और अन्त में उन्हें सूर्य में ही मिलना है क्योंकि वे सूर्य से ही जन्में हैं। ऋषि–ऋषिकाएँ सत्याचरणी एवं स्वावलम्बी थे। पशुपालन, कृषि, याज्ञिकवृति, दानग्रहण शत्रुओं से धनविजय, ये ऋषि–ऋषिकाओं के जीवन–निर्वाह के आधार थे। वेदोत्तर पुराणादि देखकर मेरा मत बना है कि पुराणादि कपट काल की रचनाएँ हैं और 'ऋग्वेद' सत्यकाल का प्रकाश है। पत्नीवान् होना, प्रजा उत्पन्न करना और पूर्ण गृहस्थ जीवन बिताना वैदिक जीवन के अनिवार्य कर्म थे क्योंकि इन कार्यों के द्वारा ही अपनी वंश परंपरा में वैदिक कर्म और वैदिक जीवन की अखण्डता संभव थी। संन्यास ऋषि अनुकूल नहीं है अपितु अवैदिक है एवं वैदिकेतर अनार्य व्यवस्था है। वेदों के आधुनिककालीन उद्धारक, गुणग्राही एक मात्र पश्चिम के देश हैं। इन्होंने तत्कालीन भारत के ब्रिटिश शासकों द्वारा 'इस्ट इण्डिया कंपनी', एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल (कलकत्ता) इत्यादि से वेदों एवं प्राच्यविद्या की हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त करके बड़े ही विद्याश्रम से उनका सम्पादन एवं मुद्रण किया। यह कर्म लगभग सन् 1805 से प्रारम्भ होकर डेढ़ सौ से अधिक काल तक चलता रहा। भारत के सभी वेद एवं प्राच्यविद्या के ग्रन्थों का प्रथम मुद्रण–सम्पादन पश्चिम के देशों में ही सम्पन्न हुआ। यदि ऐसा न हुआ होता तो वेद एवं प्राच्यविद्या की यह अमूल्य विद्या–सम्पत्ति भारत में दीमक का आहार बन जाती, सड़ जाती। मैक्स मूलर, रुडेल्फ रॉथ, ग्रासमन'', विल्सन, ग्रिफिथ, गोल्ड स्टूकर, ब्लूम फिल्ड, मोनियर विलिम्स प्रातः स्मरणीय पश्चिम के प्रमुख आधुनिककालीन प्रमुख वेदों एवं प्राच्यविद्या के विद्वान हैं। भारत में संस्कृत वेदों के प्राचीन भाष्यकार वेदोवर्ती वेदान्त, पुराण, स्मृति इत्यादि से प्रभावित होकर वेदों के भाष्य लिखे गए हैं। भारत के अधिकांश आधुनिक वैदिक भाष्यकार देवतापूर्वाग्राही और साम्प्रदायिक हैं। इन्होंने वेदों को भ्रष्ट करने में कोई कसर नहीं रखी। भारत में वेद की शुद्धता संदिग्ध है। अर्थ की दृष्टि से और न मूल ही। भारत में 'ऋग्वेद' की मूल प्रतियों में अनेक संयुक्ताक्षरों में भ्रान्तियाँ है। जर्मन विद्वान् हरमन ग्रासमान (1809–1877) द्वारा जर्मन भाषा में रचित 'ऋग्वेदकोश' इन्टरनेट से प्राप्त कर मुझे अतिव प्रसन्नता हुई।

जहाँ तक मेरा ज्ञान है भारत की किसी भी भाषा में 'ऋग्वेदकोश' नहीं है। वेदों का भाष्य कैसे करना चाहिए इसके लिए वैदिक विद्वान् रुडेल्फ रॉथ की आगमन–विधि एवं ऐतिहासिक विधि की प्रक्रिया पठनीय और आचरणीय है। आधुनिक वैज्ञानिक ग्रन्थ–समीक्षा–पद्धति एवं ग्रन्थ सम्पादन मुद्रण–पद्धति कला भारत में पश्चिम देशों की देन माना गया है। ऋग्वेद के दो से सात परिवार मण्डलों में आर्य ऋषि–ऋषिकाओं के ही सूक्त हैं। इनके प्रमुख ऋषि हैं– ऋषि गृत्समद शौनक भार्गव, ऋषि विश्वमित्र गाथिन, ऋषि वामदेव गौतम, ऋषि श्यावाश्व आत्रेय, ऋषि बार्हस्पत्य भारद्वाज और ऋषि मैत्रावरूणि वसिष्ठ। अष्टम मण्डल का प्रमुख ऋषि सोभरि काण्व, प्रथम मण्डल की ऋषि दीर्घतमा औचथ्य, दशम मण्डल का ऋषि त्रित आप्त्य, नवम मण्डल का ऋषि असित काश्यप अथवा ऋषि देवल है। परिवारमण्डलों के अतिरिक्त शेष मण्डलों में आर्येतर ऋषि–ऋषिकाओं के भी सूक्त हैं। इनमें गन्धर्व–संस्कृति के ऋषि–ऋषिकाएँ प्रमुख हैं। गण्धर्व संस्कृति के साथ आर्यों का रोटी–बेटी एवं रक्त का मधुर सम्बन्ध हो गया था, यह ऋग्वेद के सूक्तों के अध्ययन से स्पष्ट हो रहा है। ऋषि कवष ऐलूष, ऋषि संकुसुक यामायन, ऋषि कुमार यामायन इत्यादि नामों से स्पष्ट है कि ऐसे ऋषि आर्येतर हैं। दशम मण्डल में आर्येतर ऋषि–ऋषिकाएँ अधिक है। 'ऋग्वेद' में ऋषिका उर्वशी, ऋषिकाएँ काश्यपी व शिखण्डिनी दो अप्सराएँ। ये तीन ऋषिकाएँ स्पष्ट ही गंधर्व जाति की हैं। ऋग्वेद सरीखे सागर में आर्य एवं आर्येतर नाना संस्कृतियों की ऋषि–ऋषिकाओं के सूक्त–ऋचाओं से परिपूर्ण है। 'ऋग्वेद' की इक्कीस शाखाएँ थीं। आज केवल एक 'शाकलशाखा' का 'ऋग्देव' उपलब्ध है। 'ऋग्वेद' की अनन्त ऋक् राशि नष्ट हो चुकी है। वेदों के शत्रुओं ने–ऋचाओं के अर्थ को अपने स्वार्थ के लिए भ्रष्ट करके वेदों को बदनाम किया। ऐसे ही लोग वेदों के नष्ट होने में कारण बने हैं। ऋषिओं ने प्रकृति से जाना कि उग्रता और हिंसा भी सृष्टि के कारणों में से है। अग्नि, सूर्य, मरूत्, इन्द्र, रूद्र इत्यादि देव उग्र एवं सृष्टिकर्म में हिंसक भी हैं। चारों वेदों में सूर्यवत् भासमान ऋषि दीर्घतमा औचथ्य कहता है– 'जीवपीतसर्ग' (ऋग्वेद 1–149–2) अर्थात् प्राणियों में विद्यमान अग्नि जीवों को पी रहा है, खा रहा है और प्राणी इस कर्म से जीवित रह रहे हैं। प्राणियों में अग्नि द्वारा जीवों का पीना–खाना स्थगित हुआ कि–'राम नाम सत्त है।' जन्म के साथ ही इन्द्र माँ अदिति से पूछता है– माँ शत्रु बताओ। ऋग्वेद का ऋषि कहता है– 'शत्रु के शिर मेरे परशु के नीचे हैं।' पुराणों में भगवान् कहते हैं–'हमें ऐसा भक्त चाहिए जो हमारे तलवे सहलाए और हमारी आरती उतारे। यह स्पष्ट ही पुराणों के व्यास का कुप्रबन्ध है जो कि दुर्भाग्य है। हिन्दुत्व आज नष्ट होने के कगार पर सिर लटकाए खड़ा है कर्म फल भोगना ही है हर व्यक्ति तथा समाज को। मैं देख रहा हूँ कि वैदिक संस्कृति के पोत को डुबाने का प्रथम छेद 'आजीगर्त शुनःशेष' के आख्यान द्वारा क्षत्रियों के उच्छिष्ट पर पलनेवाला इतरा दासी पुत्र महीदास कर रहा है। वेदों को नीचा गिराने के अभिप्राय से और स्वयं को वेदों से श्रेष्ठ जताने के प्रयोजन से वेदों को नष्ट करने का जो सिलसिला चला उससे उत्तरवर्ती उपनिषद् भगवद्गीता, बौद्ध–जैन, साहित्य, पुराण एवं मध्यकालीन हिन्दी निर्गुण–सगुण ज्ञान–भक्ति साहित्य एवं आर्येत्तर भाषाओं में रचित साहित्या भरे पड़े हैं। अपने पूज्य पितामह और पिता को कोई लांछित करे तो कैसा लगता है ? उपर्युक्त ग्रन्थ जिन भाषाओं में रचे गए हैं उन भाषाओं का पितामह 'ऋग्वेद' है। 'ऋग्वेद' की भाषा से ही संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा लगभग आधुनिक सभी आर्य भाषाएँ विकसित हुई हैं, जो महाराष्ट्र से नेपाल एवं बिहार से कश्मीर तक बोली जाती हैं। गत तीन सहस्त्र वर्षों से भारतीय आर्य हिन्दू अपनी वेदों की वीर्यवान् और विज्ञानवान् प्रकृति की उपासना से हटकर आर्येत्तर बौद्ध, जैन, वेदान्त और पुराणों की उपासनाओं को गले

लगाकर दीन–हीन हो जीवित है। यह कैसे हुआ? यह धार्मिक उतार–चढ़ाव शताब्दियों का दीर्घकालीन इतिहास है। इस निबंध में धार्मिक उखाड़–पछाड़ का अल्प संकेत किया है। बुद्धिजीवी इससे भलीभाँति परिचित हैं। दूसरी ओर भारतीय आर्यों के ही भाई सहस्त्रों वर्ष पूर्व जो यूरोप की ओर गए। वे वेदों के रचयिता नहीं है तथापि उनका जीवन ही मानो स्वयं वेद बन गया। वे वीर्यवान् एवं विज्ञानवान् हैं। वे अपने अखण्ड पुरूषार्थ से संसार के ज्ञान–विज्ञान को प्रकाश से आलोकित कर रहे हैं। आज संसार में जितना ज्ञान–विज्ञान का आलोक है, उसका अधिकांश श्रेय यूरोप के आर्य ज्ञानियों एवं वैज्ञानिकों को ही जा रहा है।

संदर्भ

1. आचार्य राजशेखर, काब्य मीमांसा अध्याय द्वितीय पृ. 6
2. 'ऋग्वेद' के संस्कृत के सात प्राचीन भाष्य एवं भाष्यकार– स्कन्द, उद्गीथ, वेङ्कट, सायण, मुद्गल (वृत्तिकार), माधव (अडियार), कपलि शास्त्री (पांडिचेरी), (पूरा एवं होशियर)
3. ऋग्वेदसंहिता संहितापाठ, पदपाठ–मेक्ष मूलर (प्रथम सम्पादन वर्लिन, जर्मनी, देवनागरी लिपि में, तृतीय संस्करण चौखम्बा, संस्कृत सिरीज ऑफिस वाराणसी)।
4. हिन्दुओं की प्रबुद्ध रचनाएँ थ्योडोर गोल्ड स्टूकर, अनुवादिका सुश्री रमा शास्त्री सन् 1960, चौखम्बा प्रका. वाराणसी
5. घाटे द्वारा ऋग्वेद पर व्याख्यान, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 1976।
6. भाषाविज्ञानकोश, डॉ. भोलानाथ तिवारी, वाराणासी ज्ञानमण्डल लिमिटेड 1964।
7. ऋग्वेद : सृष्टि–काव्य (सम्पूर्ण ऋग्वेद की समीक्षा, सचित्र), डॉ. भ्रमरलाल जोशी, अप्रकाशित।
8. ऋग्वेद की ऋषिकाएँ सचित्र, संस्कृत के चार भाष्य उद्गीथ वेङ्कट सायण एवं वृत्तिकार मुद्गल, संहितापाठ, पदपाठ हिन्दी व्याख्या के साथ, ऋग्वेद की सभी 29 ऋषिकाएँ, अप्रकाशित, डॉ. भ्रमरलाल जोशी। 'रूडेल्फ वोन रॉथ (1821–1895) का जन्म जर्मन के स्टटगार्ट नगर में हुआ था। आपने अध्यात्मविद्या (Thology) और प्राच्य भाषाओं (Oriental Language) में पी.